नेपाल में नया संविधान

अंततः नेपाल में नया संविधान 20 सितम्बर को लागू कर दिया गया। तीन दिन पहले इस संविधान को संविधान सभा ने पारित किया था। नये संविधान के पारित होने और लागू होने के साथ संविधान निर्माण की वह प्रक्रिया पूरी हो गयी जो 2008 से ही चल रही थी। इसी के साथ वह प्रक्रिया भी समापन तक पहुंच गई जो 1996 में नेकपा (माओवादी) द्वारा जनयुद्ध छेड़े जाने के साथ शुरू हुई थी।

नवंबर 2013 में नयी संविधान सभा के चुनाव के बाद इस संविधान सभा में भी नये संविधान पर उसी तरह खींच-तान चलती रही थी जैसे पहली संविधान सभा में चली थी, हालांकि पहली के मुकाबले दूसरी संविधान सभा में माओवादी पार्टी की ताकत काफी कम हो गयी थी तथा उसने पहले ही काफी समझौता कर लिया था। परन्तु नेपाली कांग्रेस और नेकपा (एमाले) जैसी शक्तियां और ज्यादा हासिल करना चाहती थीं-खासकर संघीयता के मुद्दे पर। वे संघीय ढांचे के सवाल पर वस्तुतः पुरानी स्थिति पर जाना चाहती थीं। नयी संविधान सभा में माओवादियों के साथ-साथ मधेसी पार्टियों की ताकत भी काफी कम हो जाने के कारण उन्हें इसका अच्छा मौका भी मिल गया था। पर संविधान सभा के भीतर और बाहर प्रतिरोध के कारण वे सफल नहीं हो पा रहे थे और गतिरोध जारी था।

इसी बीच अप्रैल 2015 में जब नेपाल में बड़े पैमाने का भूकम्प आया और इससे भारी तबाही पैदा हुई तो न केवल इससे नेपाली जनता में यह मांग पैदा हुई कि राजनीतिक पार्टियां अपने गतिरोध को समाप्त कर नयी सरकार बनायें और इस आपदा से निपटें बल्कि राजनीतिक पार्टियों को भी यह मौका मिल गया कि वे इस मांग के दबाव का बहाना बना कर कुछ समझौते कर लें। खासकर प्रचण्ड और बाबूराम भट्टराई के नेतृत्व वाली एनेकपा (माओवादी) के बारे में यह ज्यादा सच था।

एनेकपा (माओवादी) ने पिछली संविधान सभा के समय से ही मधेसी पार्टियों के साथ संघीय ढांचे के सवाल पर संश्रय कायम कर रखा था। इस संविधान सभा में भी यह संश्रय जारी था और दोनों की स्थिति कमजोर हो जाने के बावजूद इसी कारण नेपाली कांग्रेस और नेकपा (एमाले) अपना मनचाहा हासिल नहीं कर पा रही थीं। अब एनेकपा (माओवादी) ने संघीय ढांचे पर समझौता करना तय कर लिया और उसका मधेसी पार्टियों से संश्रय टूट गया। ज्यादातर मधेसी पार्टियां संविधान का बहिष्कार कर सड़क पर आंदोलन के लिए उतर पड़ीं जबकि नेपाली कांग्रेस, नेकपा (एमाले) तथा एनेकपा (माओवादी) एक समय सीमा तय कर नये संविधान को पारित करने में लग गईं। संघीय ढांचे पर एनेकपा (माओवादी) के समर्पण के बाद संविधान निर्माण का गतिरोध टूट गया और नया संविधान तेजी के साथ पारित हो गया।

नेपाल के नये संविधान निर्माण के जनपक्षधर पहलुओं पर एनेकपा (माओवादी) पिछली संविधान सभा में ही काफी समझौते कर चुकी थी। वह पहले ही पीछे हटते हुए एक सामान्य पूंजीवादी संविधान तक आ चुकी थी। अब केवल संघीयता का मुद्दा ही बचा था। इस मुद्दे पर समर्पण के बाद नेपाली कांग्रेस और नेकपा (एमाले) को अपने मन-मुताबिक संविधान पारित करने और लागू करने में कोई दिक्कत नहीं थी।

पर जनयुद्ध ने दलित-वंचित जातियों, जनजातियों और राष्ट्रीयताओं में जो आकांक्षा पैदा की थी उन्हें इतनी आसानी से दर-किनार नहीं किया जा सकता था। इसीलिए एनेकपा (माओवादी) के समर्पण के बाद भी इनका प्रतिरोध जारी रहा। खासकर नेपाल के तराई क्षेत्र में इसने मधेसी और जनजाति विद्रोह का रूप ले लिया। इसमें दिसंबर तक पचास से अधिक लोग मारे जा चुके हैं।

नये संविधान के पारित होने और लागू होने के ऐन वक्त पर भारत सरकार को लगा कि वह इसमें हस्तक्षेप कर नेपाल में अपनी कमजोर होती जा रही स्थिति को फिर बहाल कर सकती है। उसने मधेसी आंदोलन का हवाला देकर नये संविधान को टालने की वकालत की। साथ ही यह धमकी भी दी कि ऐसा न करने पर बुरे परिणाम होंगे। हुआ भी यही।

जब भारत सरकार की इच्छा को नजर अंदाज कर नेपाल में 20 सितम्बर को नया संविधान लागू कर दिया गया तो भारत सरकार ने नेपाल की अघोषित नाकेबंदी शुरू कर दी। भारत से नेपाल जाने वाले सारे रास्ते बंद कर नेपाल को सामानों की आपूर्ति रोक दी। नेपाल सरकार द्वारा इस पर विरोध दर्ज कराने पर यह कहा गया कि भारत सरकार ने कोई नाकेबंदी नहीं की है। नेपाल को जाने वाले सारे रास्ते मधेसी आंदोलन की वजह से बंद हैं।

भारत सरकार की यह हरकत भारत के पूंजीपति वर्ग द्वारा नेपाल को अपना संरक्षित राज्य मानने की नीति का ही एक अंग थी, हालांकि बीते समय में स्वयं नेपाली शासक इससे बाहर निकलने की कोशिश करते रहे हैं। इसके लिए वे चीन से भी नये रिश्ते कायम कर रहे हैं। भारत का पूंजीपति वर्ग इससे बेचैन है और इसी बेचैनी में भारत सरकार नेपाल की नाकेबंदी जैसी हताशा भरी कार्यवाही कर रही है। नेपाल के मधेसी लोगों की चिंता इसके लिए केवल एक बहाना है। जो शासक वर्ग स्वयं अपने देश के भीतर उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं का घोर दमन कर रहा हो वह पड़ोसी देश में उत्पीड़ित राष्ट्रीताओं की आकांक्षाओं का समर्थक नहीं हो सकता। नेपाल में संघीय

ढांचे को लेकर चल रहे इस आंदोलन का फिलहाल किसी न किसी समझौते में अंत हो जायेगा। 20 दिसंबर को एक समझौता प्रस्तुत भी हुआ है जिसका भारत सरकार ने स्वागत किया है। इस तरह 'शांति बहाल' हो जाने के बाद नया संविधान अपनी परिणति हासिल कर लेगा। नये संविधान के तहत नयी सरकार पहले ही बनायी जा चुकी है।

2006 में जनांदोलन की सफलता और राजा के आत्मसमर्पण के समय ही यह स्पष्ट था कि नेपाली क्रांति की आगे की राह बहुत कठिन है। इसके समक्ष खड़ी आंतरिक और वाह्य दोनों चुनौतियां बहुत विकट थीं। नेपाल का आंतरिक पिछड़ापन और साम्राज्यवाद-विस्तारवाद का दबाव क्रांति के आगे विकास के सामने विशाल पहाड़ों की तरह खड़े थे। ऐसे में क्रांतिकारी पार्टी यानी नेकपा (माओवादी) की रणनीतिक-रणकौशलात्मक कुशलता पर बहुत कुछ निर्भर करता था। अभी तक उसने इसमें दक्षता का परिचय भी दिया था।

इसीलिए जब 2008 के संविधान सभा चुनाव में नेकपा (माओवादी) ने अप्रत्याशित सफलता हासिल की तो बहुत सारे शंकालु लोग भी इसके मुरीद हो गये। वे आशान्वित हो उठे। परन्तु यही नेकपा (माओवादी) का चरम बिन्दु भी था। यहां से आगे की उनकी सारी यात्रा क्रमशः पतन की यात्रा रही है।

पर इस क्रमिक पतन को बुर्जुआ संसदीय पतन मानना गलत होगा। और न ही इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उनकी तब तक अपनाई गई रणनीति और रणकौशल गलत थे। असल में नेकपा (माओवादी) के पतन के बीज उन विचारधारात्मक अवस्थितियों में छिपे थे जो उन्होंने अपना ली थीं।

नेकपा (माओवादी) ने विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन के पुनर्मूल्यांकन के नाम पर वे बहुत सी बातें अंगीकार कर ली थीं जो उसे मार्क्सवाद से दूर ले जाती थीं। इन बातों की हमने 2004 में और फिर 2007 में आलोचना की थी। इन विचारधारात्मक भटकावों का सार बुर्जुआ जनवाद के बारे में मार्क्सवादी धारणाओं को नकार कर 'जनवाद' को अमूर्त रूप में पेश करने में निहित था जिसका असल मतलब था बुर्जुआ जनवाद को अपनाना। इन्हीं के कारण हमने क्रांति के आगे विकास में इन विचारधारात्मक भटकावों को एक महत्वपूर्ण बाधा बताया था।

आज यह स्पष्ट है कि बुर्जुआ जनवाद से आगे नेपाली क्रांति के विकास न करने में जहां वस्तुगत परिस्थितियों की प्रमुख भूमिका थी वहीं इस बुर्जुआ जनवाद में जनपक्षधर प्रावधानों को न हासिल कर पाने में तथा स्वयं नेकपा (माओवादी) के पतित होकर एक व्यवस्था परस्त पार्टी बन जाने में उसकी गलत सैद्धान्तिक अवस्थितियों की प्रमुख भूमिका थी। यदि माओवादी पार्टी गलत सैद्धान्तिक जमीन पर नहीं खड़ी होती तो बुर्जुआ संवैधानिक दायरे से खुद को नहीं बांधती, कदम-दर-कदम समझौता करते हुए लगातार पीछे नहीं हटती जाती और इस तरह जनयुद्ध के दौरान हासिल सारी उपलब्धियों को नहीं खोती। संविधान सभा के दायरे को त्यागकर सड़क का रास्ता पकड़ लेने से वह न केवल बुर्जुआ वर्ग को जनपक्षधर प्रावधानों के लिए कुछ झुका सकती थी बल्कि ऊपर से नीचे तक अपनी कतारों को भी बुर्जुआ व्यवस्था में जज्ब होने से और फलतः पतित होने से भी बचा सकती थी। यह नये विद्रोह का रास्ता नहीं होता और न इससे तुरंत क्रांति के नये चरण की शुरुआत होती पर इससे जनयुद्ध की कुछ उपलब्धियों को बचाया जा सकता था और साथ ही पार्टी को पतित होने से भी। तब नेपाल को शायद बेहतर जनकल्याणकारी संघीय जनतंत्र हासिल हुआ होता। (लेकिन तब भी यह कहा जाना चाहिए कि नेपाल के नये पूंजीवादी संविधान की भारत के लचर और किसी हद तक अलोकतांत्रिक संविधान से तुलना नहीं की जा सकती)।

पर ऐसा नहीं हो सका। प्रचण्ड और बाबूराम भट्टराई के नेतृत्व में नेकपा (माओवादी) संसदीय जोड़-तोड़ में लगी रही तथा किरन और बादल भी उनके साथ घिसटते रहे। स्थिति वहां पहुंच गई जहां भट्टराई ने प्रधान मंत्री बनने के लिए पार्टी के भीतर जोड़-तोड़ की और प्रचण्ड के मुकाबले के लिए किरन-बादल ने उनका साथ दिया। मूलतः उन्हीं वैचारिक स्थितियों पर खड़े होने के कारण किरन-बादल पहली संविधान सभा के भंग होने तक अलग होने का साहस नहीं कर सके। केवल उस संविधान सभा के भंग होने पर ही उन्होंने अलग पार्टी बनाई।

नयी संविधान सभा में न केवल प्रचण्ड-भट्टराई की माओवादी पार्टी की ताकत बहुत कम हो गई बल्कि वे व्यवस्था में और ज्यादा ढल गये। इसीलिए संघीय ढांचे पर और ज्यादा झुकने का जब उन्हें बहाना मिला तो वे झुक गये और नेपाली कांग्रेस और नेकपा (एमाले) का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

संविधान बनते ही भट्टराई ने माओवादी पार्टी से अलग होने की घोषणा कर दी। वे और उनके समर्थक करीब छः महीने पहले से ही पार्टी के भीतर अलग पार्टी की तरह व्यवहार कर रहे थे। अब वे औपचारिक तौर पर अलग हो गये। अलग होकर उन्होंने माओवादी पार्टी के साथ-साथ नेपाली कांग्रेस, एमाले और अन्य तमाम पार्टियों के लोगों का आह्वान किया कि वे एक नयी पार्टी बनाने के लिए उनके साथ आयें। इस नयी पार्टी का उद्देश्य नेपाल का विकास होगा। भट्टराई अभी भी समाजवाद के हामी हैं पर उनका तात्कालिक लक्ष्य नेपाल का विकास यानी बुर्जुआ विकास है। स्पष्ट है कि इस तरह की घोषणा से भट्टराई ने यह बता दिया कि मार्क्सवाद से उन्होंने नाता तोड़ लिया है। कम से कम उनके मार्क्सवाद का कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के मार्क्सवाद से कोई लेना-देना नहीं है। उसका लेना-देना संशोधनवादियों के 'मार्क्सवाद' से है।

प्रचण्ड ने भट्टराई की तरह बेहयाई भरी स्पष्टवादिता नहीं दिखाई। लेकिन वे भी फिलहाल भट्टराई की तरह नेपाल के पूंजीवादी विकास के पक्षधर हैं। हालांकि उनका कहना है कि जनवादी क्रांति पूरी कर नेपाल समाजवादी क्रांति के चरण में पहुंच चुका है पर उनके व्यवस्था में जज्ब हो जाने से इस बात का कोई मतलब नहीं रह जाता। अब नेपाल का पूंजीवादी विकास करने के नाम पर उनकी पार्टी के लोग सरकार में शामिल होकर सत्तासुख भोग रहे हैं और दिनों-दिन और पतित होते जा रहे हैं। प्रचण्ड तो अब एमाले समेत सभी 'कम्युनिस्टों' की एकता की बात भी करने लगे हैं। स्पष्टतः ही अब प्रचण्ड और उनकी पार्टी को कम्युनिस्ट क्रातिकारी नहीं कहा जा सकता।

जहां तक प्रचण्ड-भट्टराई से अलग हुए किरन-बादल की बात है तो वे न तो पुरानी गलत सैद्धान्तिक अवस्थितियों से मुक्ति पा कर सही रणनीति और रणकौशल अपना पाये और न अपनी एकता बनाये रख सके। वे पुरानी गलत सैद्धान्तिक अवस्थितियों के साथ पुरानी रणनीति से ही चिपके हुए हैं। वे नेपाल के बदले हालात को संज्ञान में लेने को तैयार नहीं हैं। फलतः उनकी सारी बातें निष्क्रिय उग्र परिवर्तनवाद तक सीमित होकर रह जाती हैं। चूंकि उन्होंने 2012 में प्रचण्ड-भट्टराई धड़े से अलग होकर सत्ता प्रतिष्ठानों को छोड़ दिया इसलिए उनकी कतारों का उस हद तक पतन नहीं हुआ जिस तरह प्रचण्ड-भट्टराई धड़े की कतारों का। पर तब भी इनकी कतारें किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति में हैं और यह स्थिति उन्हें राजनीतिक निष्क्रियता तथा पूंजीवादी व्यवस्था में समाहन की ओर ले जाती है। पूंजीवादी व्यस्था में उस हद तक जज्ब न होने के बावजूद किरन-बादल के धड़ों की स्थिति भविष्य की क्रांतिकारी दिशा में कोई उम्मीद नहीं जगाती।

एक मुकाम हासिल कर अब नेपाल क्रांति के नये चरण में है। यह चरण समाजवादी क्रांति का है। इस क्रांति को सम्पन्न करने के लिए नयी कम्युनिस्ट क्रांतिकारी शक्तियों की आवश्यकता होगी। इनसे निर्मित एक नयी पार्टी ही इस क्रांति के कार्यभारों को पूरा करने में सक्षम होगी। जहां तक नेपाल की क्रांति की अभी तक की यात्रा का संबंध है, सर्वहारा क्रांतियों के बारे में मार्क्स के शब्द इसके लिए भी उपयुक्त समाहार का काम करेंगे।

> "दूसरी ओर, उन्नीसवीं शताब्दी की क्रांतियों जैसी सर्वहारा क्रांतियां निरंतर अपनी आलोचना करती हैं, आगे बढ़ते-बढ़ते स्वयं ही बार-बार रुक जाती हैं, जाहिरा तै किये हुए रास्ते पर फिर लौट आती हैं ताकि अपनी यात्रा दोबारा शुरू करें, अपने प्रथम प्रयासों की अपर्याप्ताओं, कमजोरियों और तुच्छताओं की निर्मम अद्यंत भर्त्सना करती हैं, शत्रु को मानो इस लिए पटकती हैं कि वह धरती से नवीन बल प्राप्त कर और अधिक विराट होकर फिर उनके सामने आये; स्वयं अपने लक्ष्यों के अस्पष्ट से विराट आकार से बारंबार झिझककर पीछे हट जाती हैं-तब तक, जब तक कि ऐसी परिस्थिति तैयार नहीं हो जाती जिसमें पीछे हटना बिल्कुल असम्भव होता है और अवस्थाएं स्वयं पुकार कर कहती हैं:
>
> यहां गुलाब, नाचो यहां!"
>
> Hic Rhodus, hicSaltal
>
> (लुई बोनापार्त की अठारहवीं ब्रूमेर, मार्क्स, एंगेल्स संकलित रचना खण्ड-1, भाग-2, पृष्ठ-134-135)

[इस के साथ **लाल सलाम** के अंक 9, 13, 15 और 25 में प्रकाशित क्रमशः इन लेखों और दस्तावेज को भी देखें : नेकपा (माओवादी) : एक आलोचना; नेपाली क्रांति जिन्दाबाद; नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के विचारधारात्मक भटकावों के बारे में; नेपाली क्रांति नये मोड़ पर। ये क्रमशः जुलाई 2004, जुलाई 2006, जुलाई 2007 और जुलाई 2012 में प्रकाशित हुए थे]

■■■